ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBBIL04292
RNI REG. NO. UPBBIL/2014/66218 PP. NO.- 82-85

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-I, Issues-16 YEAR- June. -2020

''मेघदूत'' राष्ट्रीयता का उन्मेष

हिमा गुप्ता

सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग, संस्कृत राजकीय कला महाविद्यालय,कोटा (राजस्थान), भारत

Received- 05.03.2020, Revised- 09.03.2020, Accepted - 13.03.2020 E-mail: himmanu@gmail.com

सारांश : *विना वेदं विना रामायणी कथाम्।*
कालिदासं विना लोके कीदृशी भारतीयता।।

यह कथन अनेक बुद्धिजीवीयों को अतिरंजनापूर्ण प्रतीत हो सकता है, किन्तु उनके लिए ही, जिन्होंने वेद गीता,रामायण व कालिदास को जाना न हो, पढ़ भले लिया हो। वेद वर्तमान में अपनी दुरूहता के कारण दुर्ज्ञेय हो गये हैं, किन्तु यावत् रूप में जो ज्ञेय है ,वह ऋशियों की सुनियोजित चिन्तन परम्परा की उच्चता का उद्घोष करते हैं। गीता व रामायण कर्म व भक्ति के समन्वय सहित कृश्ण व राम को देवत्व की प्राप्ति कराते हैं। कृष्ण व राम की नायकोचित उपजीव्यता के विषय में कथनीय कुछ नहीं है।

कुंजीभूत शब्द– कीदृशी, यावत् रूपअतिरंजनापूर्ण, दुरूहता, चिन्तन परम्परा दुर्ज्ञेय, उच्चता, नायकोचित, उपजीव्यता।

कालिदास की काव्य–पयोधि का अवगाहन करने वाले अध्येता जानते हैं कि उनकी प्रतिभा की त्रिवेणी–नाटककार, गीतिकाव्यकार एवं महाकाव्यकार के रूप में कितना रसाप्लुत कराती है। कविता कामिनी के विलास तथा परवर्ती कवियों के लिए प्रकाष महाकवि कालिदास की भारती का कविरत्न–प्रसू भारत–भू के साथ जो समवाय सम्बन्ध है, निश्चय ही कहा जा सकता है कि नैसर्गिक रूप से भारत तथा भारतीयता का संबंध उपर्युक्त चतुष्टय (वेद, गीता, रामायण व कालिदास) से आज भी विद्यमान है। गीता का संबंध महाभारत से है, जिसका प्रधान रस शान्त है,रामायण का प्रधान रस करूण है, वहीं कालिदास की रचनाओं का प्रधान रस, रसराज श्रृंगार हैं। श्रृंगार के दोनों भेद संयोग तथा वियोग का विलक्षण प्रयोग कालिदास की रचनाओं में प्राप्त होता है, यही कारण है कि पाश्चात्य विद्वान् भी उन्हें श्रेष्ठ कवि मानने के लिए विवश हैं।

''मेघदूत'' कालिदास की आनन्द निर्झरिणी का वह स्रोत है, जिसने भारत में ही नहीं विदेशों में भी अभिनव संदेष दिये हैं। पौरस्त्य एवं पाश्चात्य विद्वानों ने इसकी मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की है। मेघदूत काव्य आज भी आशाढ़ मास में विरहगीति की स्मृति को जागृत कर देता है और आज भी ग्राम–वधुओं का आशा–केन्द्र तथा प्रकृति–पुरूश है। ऐसे काव्य पर कुछ नया उन्मेश या मौलिकता का आग्रह करते समय ये सूक्ति कालिदास के शब्दों में ही 'मन्दः कवियषः प्रार्थी गमिष्याम्युपहास्यताम्'(रघुवंशम् 1.3) आती हैं। पुनः'मेघदूत' विषय क्यों? इसका उत्तर भी महाकवि का कथन 'तद्गुणैः कर्णमागत्य चापलाय प्रणोदितः' (रघुवंशम् 1.9) प्रमाण हैं।

मेघदूत काव्य भारत की अमूल्य साहित्यिक निधि है। प्रकृति की सान्द्र छाया में रचित कवि की स्वस्थ एवं स्वच्छ तूलिका से चित्रित प्राकृतिक दृश्यों की चित्रमाला है। उस चित्रमाला के माध्यम से कवि ने भारत–भू का परिचय तथा राष्ट्रीय चेतना का परिचय दिया है। प्रकृति से प्रेम ही भारतीयता की सबसे बड़ी पहचान है। आंतरिक और बाह्य जीवन को सम्पूर्ण बनाने के लिए सारा प्रयत्न है। भारत भूमि के भौगोलिक दृश्यों तथा पौराणिक उपाख्यानों की ओर संकेत, ग्रामबाला आदि की प्रकृति तन्मयता इत्यादि सभी प्राकृतिक दृश्य भारतीय धरा का साक्षात् कराते हैं। मेघदूत की भाशा प्रांजल, परिश्कृत, विषयानुकूल तथा प्रवाहमयी है। इसमें विरहविधुर यक्ष की भावनाओं के अनुरूप सुकोमल कल्पनाओं का विविध विलास तथा माधुर्य व्यंजक पदावली का प्रयोग हुआ है।कवि की कल्पनाशीलता का इससे सुन्दर प्रयोग अन्यत्र दुर्लभ है जो अज्ञात नायक को सार्वकालिक और सार्वदेषिक बना देती है, निश्चय ही अन्य कवियों के लिए प्रेरणादायी हैं।

यह काव्य अनुपम और सर्वोत्कृष्ट केवल इसीलिए नहीं है कि रसराज श्रृंङ्गार का यहाँ परम परिपाक हुआ है। इसलिए भी यह महान् गीतिकाव्य या खण्डकाव्य या संदेश काव्य नहीं है या कि इसमें वैदर्भी रीति का अनुपम औचित्य के साथ निर्वहन हुआ है। इसलिए भी नहीं कि यहाँ अलंकारों का अतीव स्वाभाविकता के साथ प्रयोग हुआ है और उपमा का प्रयोग तो अपूर्वता के साथ हुआ है। यह तो काव्यपुरूष का भौतिक कलेवर है। वरन् कालिदास ने यहाँ इनका समावेश अपूर्व औचित्य के निर्वहन के साथ किया है। कालिदास तो इसके माध्यम से कुछ और ही कहना चाहते हैं। वे पाठकों व दर्शकों को भारतीयता के दिव्य संदेश देना चाहते हैं, जिनसे यह तथ्य सदियों तक विश्व के मानस पटल पर अंकित रहे कि तत्कालीन भारत

अनुरूपी लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-I, Issues-16 YEAR- June. -2020

ज्ञान–विज्ञान, सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, दार्शनिक सभी दृश्टिकोण से "विश्व–गुरू" पद पर आसीन था। वह प्रकृति के उद्दाम स्वरूप में सहज जीवन–पद्धति का निदर्शन कराना चाहता है। जिससे मानव और प्रकृति एक–दूसरे के नितान्त हितेच्छु बन सकें। वह यह कहना चाहता है कि हम अति भोगवादी बनकर प्रकृति का इतना दोहन न कर डालें कि हमारा अस्तित्व ही संकट में पड़ जाये। हमारी जीवन–पद्धति में नैतिकता का क्या महत्व है, मानवीय मूल्यों की क्या गरिमा और महत्ता है कि जिनसे हम प्रकृति के हर प्राणी और वस्तु के साथ तादात्म्य भाव का अनुभव करते हुए उसके पोषक बन सकें, शोषक नहीं ? प्रकृति के साथ आत्मीयता का भाव होने पर हम किस प्रकार समृद्ध हो सकते हैं और उस समृद्धि का स्वरूप कैसा होगा ? यह अनुभूति कराकर उसकी ओर प्रेरित करना उनका उद्देश्य था। त्याग, तपोवन, तप, सत्य, अहिंसा, अपरिग्रह, सदाचार, करूणा, परोपकार जैसे महनीय मानव–मूल्यों का क्या प्रभाव पड़ता है ? और समाज किस प्रकार इनसे सकारात्मक सोच वाला बन जाता है – यह सब कालिदास ने अपने काव्य के माध्यम से हमें कहना चाहा है।

महाकवि कालिदास ने मेघ को दूत बनाकर यक्ष के माध्यम से भारत–भू की वन्दना तथा राष्ट्रीय चेतना का परिचय दिया है। प्रकृति की सान्द्र छाया मनुष्यों के ऊपर स्पष्ट झलकती है। पर्वतों से लिपटी सरिताएँ प्रणयिनी की भाँति अपनी चितवनों से पथिकों को आकृष्ट करती है। जलकणवाही सुख शीतल, केतकगन्धी, गन्धवाह (वायु) का चित्रण स्पृहणीय है। प्रिय–समागम के प्रति मयूर के प्रमोद–नृत्य का स्निग्ध चित्रण है। कृषि का फल मेघ के अधीन है –**"त्वय्यायत्तं कृशिफलम्" (पू.मे. 16)**

यह भारत की भूमि वन्दनीय है, जहाँ प्रकृति का वैभव अपने सभी रुपों में एक साथ एकत्र प्रेक्षणीय है। इस धरा के जिन स्थलों की चर्चा हुई है, संक्षेप में इस प्रकार हैं –

रामगिरि (नागपुर या रामटेक),मालक्षेत्र (रतनपुर के समीप मालवा), आम्रकूट (अमरकण्टक), नर्मदा नदी, दशार्ण, (छत्तीसगढ़) वेत्रवती (वेतवा), विदिशा (भिलसा), नीचैः (विदिषा की समीपस्थ पहाड़ी), निर्विंधन्या, सिन्धु नदी, अवन्ती, शिप्रा, उज्जयिनी, गम्भीरा नदी, देवगिरि (देवगढ, झाँसी के दक्षिण–पश्चिम में स्थित), चर्मण्वती (चम्बल), दशपुर (मन्दसौर), ब्रह्मावर्त (हस्तिनापुर का उत्तरी भाग), कुरुक्षेत्र, सरस्वती नदी, कनखल (हरिद्वार के समीपस्थ), गड्गा नदी, हिमालय पर्वत, क्रौंचरन्ध्र (मानसरोवर का द्वार), कैलाश पर्वत तथा वहीं पर स्थित अलका आदि।

रामगिरि वह पहाड़ी है, जहाँ पर धनपति कुबेर के शाप से निर्वासित जीवन बिता रहे विरही यक्ष के उत्कण्ठित हृदय के मार्मिक एवं मनोहारि चित्रण से मेघदूत का प्रारम्भ होता है, जहाँ राम सीता ने निर्वासन काल का अधिकांश भाग व्यतीत किया था। उस रामगिरी नामक स्थान पर विरही यक्ष अपने विरह के दिन व्यतीत करता है और यहीं मेघ को देखकर उससे अपनी प्रिया यक्षिणी के पास सन्देश ले जाने की याचना करता है। इसी सन्दर्भ में वह उसे अलकापुरी का गन्तव्य मार्ग बताता है, जहाँ यक्षिणी निवास करती है। उसके द्वारा निर्दिष्ट मार्ग सीधा सादा नहीं है वरन् भारत में वर्षा ऋतु में मेघों के उत्क्रमण मार्ग का ही वर्णन है। यह कालिदास के सूक्ष्म भौगोलिक ज्ञान के साथ–साथ प्रकृति की निरीक्षण शक्ति में गहरी पकड़ का भी परिचायक है। इतना है नहीं, सम्पूर्ण वर्णन से रामगिरी पर्वत से लेकर अलकापुरी तक के अखण्ड भारत की कल्पना से कवि ने राष्ट्रीय भावना की मनोरम झाँकी प्रस्तुत की है। रामगिरि या रामटेक (नागपुर से उत्तर पूर्व में कुछ मील पर स्थित) एक सरोवर में जानकी ने स्नान कर उसे पवित्र किया था –**'जनकतनयास्नानपुण्योदकेशु।" (पूर्वमेघ 1)**

वहाँ गेरू से यक्ष ने अपनी प्रियतमा का चित्र बनाया –**त्वामालिख्य प्रणयकुपितां धातुरागैः शिलायाम्।" (उत्तरमेघ 45)**

यक्ष कहता है कि इस पवित्र पर्वत का आलिंगन कर और इससे विदा लेकर मेघ को सीधे उत्तर की ओर चलना चाहिये, जहाँ सर्वप्रथम माल क्षेत्र (मालवा का पठार) मिलेगा और वहाँ इस प्रकार जल बरसा कर कि भूमि हल चलाने योग्य हो जाये तथा मेघ का भार कुछ कम हो जाये तो उसे शीघ्रता से उत्तर की ओर ही चल देना चाहिये –

सद्यः सीरोत्कषणसुरभि क्षेत्रमारूह्य मालम्।
किंचित् पश्चात् व्रज लघुगतिर्भूय एवोत्तरेण।।
(पूर्वमेघ8)

यह माल क्षेत्र नर्मदा नदी घाटी के आम्रकूट पर्वत और रामगिरि के मध्य स्थित है। वर्षाजल सिंचन से यह पठार कृषि योग्य हो जाता है। यह क्षेत्र नदियों एवं पर्वत श्रृंखलाओं से आवेष्टित होने के कारण मानसून में यहाँ का प्राकृत्तिक दृश्य अत्यन्त आकर्षक होता है अतः कवि ने इस क्षेत्र का विस्तृत वर्णन किया है। इसके उत्तर में आम्रकूट पर्वत के आम्रवनों का वर्णन करते हुए पृथिवी को नायिका का रूप दिया है। विन्ध्याचल की सतपुड़ा पर्वत माला के दक्षिण पूर्व में स्थित पर्वत श्रृंखला पर मेघ को विश्राम करने का परामर्श दिया है –**वक्ष्यत्यध्वश्रमपरिगतं सानुमानाम्रकूटः (पू.मे.17)।**

इसके आगे रेवा (नर्मदा) नदी विन्ध्यपाद की ऊँची नीची चट्टानों पर बहती है –

रेवां द्रक्ष्यस्युपलविशये विन्ध्यपादे विषीर्णाम्।" (पू.मे.19)

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-I, Issues-16 YEAR- June. -2020

यह अमरकण्टक की मेकल श्रेणियों से निकलकर बहती है। अतः रेवा का दूसरा नाम मेकल कन्यका भी है। मध्य प्रदेश के बाद इसका प्रवाह क्षेत्र विस्तृत हो जाता है। इसके दोनों किनारों पर पर्वत श्रेणियाँ दूर–दूर तक चली जाती हैं। यक्ष के अनुसार, इस नदी से जल भर कर मेघ को आगे दषार्ण प्रदेष पहुँचना चाहिये। वेत्रवती (वेतवा) नदी के तट पर स्थित, जिसकी राजधानी विदिशा (भिल्सा) थी। मालवा के पूर्वी भाग में स्थित यह प्रदेष राजनीतिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण था। इस दशार्ण के पश्चिमी भाग में अवन्ति प्रदेश था, जिसकी राजधानी उज्जयिनी थी। इसकी पूर्वी सीमा पर चेदि, मगध एवं उत्तरी सीमा पर कौशल, वत्स आदि राज्य रहे होंगे। आगे मेघ को नीचैः नामक पर्वत पर जाने का परामर्श दिया जाता है –

"नीचैराख्यं गिरिमधिवसेस्तत्र विश्रामहेतोः।"
(पूर्वमेघ 26)

जहाँ पाषाण कन्दराएँ हैं और विदिशा के नागरिक वारांगनाओं के साथ विलास क्रीड़ा करते थे। उज्जयिनी का मार्ग यद्यपि कुछ वक्र है। (उत्तर दिशा छोड़कर पश्चिम की ओर)

वक्रः पन्था यदपिभवतः प्रस्थितस्योत्तराशां,
सौधोत्संग प्रणयविमुखी मास्म भूरूज्जयिन्याः।"
(पूर्वमेघ 28)

तथापि वैभवशालिनी, धर्म, व्यापार और राजनीति का केन्द्र, जहाँ सुरम्य उद्यान तथा विस्तृत विपणिपथ थी थे, वहाँ शिप्रा (चम्बल की सहायक नदी) के तट पर स्थित नगरी में जाने के लिए निर्विन्ध्या (चम्बल की सहायक नदी) नदी को पार करके जाना था।जहाँ गन्धवती नदी प्रवाहित होती है।

धूतोद्यानं कुवलयरजो गन्धिभिर्गन्धवत्याः। (पूर्वमेघ 36)।

केतकी, जामुन आदि वन्य सम्पदा का मनोहारी वर्णन प्रस्तुत करते हुए कालिदास मेघ को उज्जयिनी के अपने विशिष्ट प्रेम से वशीभूत होकर, उस महाकाल के प्रदेश में अधिक रहने और बरसने का निवेदन करते हैं। यह भी सम्भव है कि श्रुतपूर्व कथानक के अनुसार, कुबेर की सेवा में यक्ष भवानीपति के उपक्रमों का ही समाहरण किया करता था और उज्जयिनी में भी उनका वास है। अस्तु। महाकालेष्वर का मन्दिर और उनका उद्यान इसके तट पर स्थित होने के कारण इस छोटी नदी का भी इतना महत्व है। उज्जयिनी से प्रयाण करके सीधे मार्ग पर चलकर मेघ गम्भीरा नदी के तट पर पहुँचेगा –

"गम्भीराया पयासि सरितष्चेतसीव प्रसन्ने (पूर्वमेघ 43)।

शिप्रा की ये सभी सहायक नदियाँ प्रतीत होती हैं। शिप्रा पवित्र पौराणिक नदियों में से एक प्रसिद्ध नदी रही है। यहाँ से आगे चलकर मेघ को देवगिरि (झाँसी के दक्षिण में स्थित देवगढ़) पर पहुँचना है, जहाँ पर स्कन्द (स्वामी कार्तिकेय) का प्रसिद्ध मन्दिर है

नीचैर्वास्यत्युपजिगमिशो देवपूर्वं गिरिं ते। (पूर्वमेघ 45)।

यह एक पवित्र तीर्थ स्थल रहा होगा इससे आगे चर्मण्वती (चम्बलनदी)मिलेगी–

व्यालम्वेथाः सुरभितनयालम्भजां मानयिश्यन्। (पूर्वमेघ 48)

यह यमुना नदी की मुख्य सहायक नदियों में एक प्रसिद्ध नदी है। पौराणिक आख्यान के अनुसार यह रान्तिदेव द्वारा किये गये गावालम्भन से उत्पन्न हुई थी और इसका उत्पत्ति क्षेत्र विन्ध्य पर्वत की पश्चिमी श्रेणी है। अरावली की श्रेणियों के निकट कोटा, बूंदी और धौलपुर से होकर बहती हुई 8 सौ मील विस्तृत क्षेत्र पार कर इटावा से 25 मील पूर्व यमुना में गिरती है। इसका प्रवाह अत्यन्त त्रीव होता है। इसको पारकर मेघ आगे दषपुर (मन्दसौर) पहुँचता है –

पात्रीकुर्वन् दशपुरवधूनेत्रकौतूहलानाम्।(पूर्वमेघ 50)

प्राचीनकाल में यह एक प्रसिद्ध व्यापार स्थल था। इसके बाद मेघ ब्रह्मावर्त प्रदेश को पार करता हुआ कुरूक्षेत्र पहुँचेगा और सरस्वती नदी के जल का पान कर स्वयं को पवित्र करेगा।

ब्रह्मावर्तं जनपदमथच्छायया गाहमानः
क्षेत्रं क्षत्रप्रधनपिशुनं कौरव तद भजेथाः।
(पूर्वमेघ 51)

मनु के अनुसार, सरस्वती और दृशद्वती नदियों के मध्य का स्थान ब्रह्मावर्त कहलाता है–

सरस्वतीदृशद्वत्योर्देवनद्योर्यदन्तरम्।
तं देवनिर्मितं देशं ब्रह्मावर्तं प्रचक्षते।
(मनुस्मृति 217)

इसके बाद उसे गंगा नदी के उत्पत्ति स्थान हिमालय पर पहुँच कर कुछ क्षण विश्राम करना चाहिये–

तस्या एवं प्रभवमचलं प्राप्य गौरं तुशारैः।" (पूर्वमेघ 55)

यदि वहाँ दावानल जल रहा हो तो उसे शान्त कर देना जिससे चमरी गाय के बाल नहीं जलें –

बाधेतोल्काक्षपितचमरीवालभारोदवाग्निः।(पूर्वमेघ 56)

हिमालय की शिला पर व्यक्त भगवान शिव के चरण चिह्नों (हर की पौढ़ी)की भक्तिपूर्वक परिक्रमा करके ही क्रौंचरन्ध्र की ओर जाना चाहिये जो मानसरोवर को जाने वाले हंसों का प्रवेश द्वार है। यह क्रौंच पर्वत परशुराम की कीर्ति का प्रख्यापक है क्योंकि उन्होंने स्कन्द से स्पर्धा करते हुए अपने तीक्ष्ण बाण से इससें छिद्र कर दिया था। सम्भवतः उस काल में हंस इसी मार्ग से भारत में प्रवेश करते हों। यहाँ से उत्तर की ओर चलकर कैलाश पर्वत पर मेघ को पहुँचना है। यहाँ पर मानसरोवर स्थित है, वह उससे जल ग्रहण कर सकता है। यहीं निकट में कैलाश पर्वत के अंक में अलकापुरी स्थित है, जो मेघ का गन्तव्य है। यहीं यक्ष

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-I, Issues-16 YEAR- June. -2020

का आवास स्थल हैं, जहाँ पर उसे यक्षिणी को सन्देश देना है– **तस्योत्संगे प्रणयिन इव स्रस्तगंगादुकूलां।**
न त्वं दृष्ट्वा न पुनरलकां ज्ञास्यसे कामचारिन्।।
(पूर्वमेघ 66)

धनपति कुबेर के शाप से निर्वासित विरही यक्ष के उत्कण्ठित ह्रदय का मार्मिक चित्र उपस्थित करते हुये राम–सीता निर्वासन के ऐतिहासिक आख्यान से प्रारम्भ करके महाकवि ने अनेक पौराणिक–ऐतिहासिक तथ्यों, घटनाओं की ओर इंगित किया है, प्रमुखतः कुबेर–अलका, कैलास–शिव, उज्जयिनी–महाकाल, शिव–गजासुर, स्कन्द (देविगिरि)–तारकासुर, रन्तिदेव–चर्मण्वती, कौरव–पाण्डव युद्ध, बलराम–रेवती, सगर–भागीरथ–गंगा, परशुराम पराक्रम, राजा बलि–वामनावतार, भृगु–वंश, रावण–शिव (कैलाश), शिव–पार्वती आदि अनेक वृत्तान्त महाकवि की स्वतः स्फूर्त लेखनी से प्रसूत हुए हैं जिनसे चित्रपट पर खिंचते दृश्यों की भांति मनश्चेतना में एक–एक दृश्य अपने आप उभरता चला जाता है। यही नहीं महाकवि कालिदास की प्रकृति मानव के सुख–दुःख में समान रूप से हाथ बटाँकर तादात्म्य स्थापित करती है। भारतीय मनीशा काम के दो रूप प्रस्तुत करती है। काम का अपरिष्कृत रूप वासना तथा परिष्कृत रूप प्रेम कहलाता है। वासना अधःपतन तथा प्रेम सम्मान, शक्ति व उत्कर्ष का कारण होता है। भूत–भावन शिव के निवास कैलाश पर रहने वाला कामी यक्ष अपनी वासना से कर्त्तव्यच्युत होकर अधःपतित हुआ। पुनः उसकी वासनात्मक काम शक्ति मदन–दाहक भगवान शिव को अर्पित हो जाती है। इसके साथ ही कर्त्तव्यविमुख व्यक्ति दण्ड का भागी होता है, जो समाज को ग्राह्य नहीं। ये आध्यात्मिक मान्यताएँ एवं लौकिक आस्थाएँ मनुष्य को नैतिकता के सार्वभौम उत्कर्ष के मार्ग पर प्रेरित करती है। यक्ष की एकनिष्ठता दाम्पत्य जीवन का सार है। तथा भारतीय आदर्श का चरम उत्कर्ष है। सरल दाम्पत्य तथा पुरुषार्थ उन्मुखता दो ऐसे विषय है – जहाँ साधारणतया मनुष्य सामंजस्य नहीं बैठा पाता और कभी दाम्पत्य जीवन तो कभी कार्य क्षेत्र में कर्त्तव्यच्युत हो जाता है, किन्तु ऐसा मनुष्य तिरस्कार्य अथवा त्याज्य नहीं है, अपितु पश्चाताप करता हुआ जब वह पुनः कर्त्तव्य बोध से युक्त होता है, तो उसे समाज द्वारा सहर्ष ग्रहण करना चाहिये। मेरे मत में यही छिपा सन्देश भारतीय परिप्रेक्ष्य में राष्ट्रीय भावना को भी प्रबल करता है, जहाँ प्रेम करके छोड़ देने में नहीं, अपनाने में निहित होता है, दुर्व्यसनी को भी सुधार कर समाज में अन्तर्निहित करने में विश्वास रखता है। कालिदास मुख्यतः मानवोचित भावुक ह्रदय के कवि हैं अथवा प्राकृतिक सौंदर्य के इनमें से किसी एक से पक्षपात नहीं किया जा सकता। दोनों गुण उनमें रासायनिक ढंग से मिले हुए हैं। बाह्य प्रकृति तथा अन्तः प्रकृति के चित्र मानवीय भावनाओं के साथ खींचे गये हैं। वस्तुतः प्रकृति के चितेरे महाकवि कालिदास प्रकृति के नानारुपों के नयनाभिराम दृश्य खींचने के लिए विश्व विश्रुत हैं। उनकी प्रकृति मानव की चिर सहचरी है और उपकारी आलम्बन एवं उद्दीपन रूपों में चित्रित हुई। इस कृति को पढ़ने पर रसानन्द की प्राप्ति तो होती ही है, साथ ही समग्र भारत की संस्कृति और सभ्यता का साक्षात्कार हो जाता है। कालिदास की इस अनुपम कृति में एक साथ सम्पूर्ण भारत की काव्यकला, शिल्पकला, राजनीति, प्रकृति, नीतिवत्ता, आर्थिक व सामाजिक स्थिति आदि का दर्शन हो जाता है अर्थात् भारतीयता का यह साक्षात् निदर्शन है।

प्रश्न ये भी उठता है कि कालिदास ने वर्षा की पटभूमिका में विरहकाव्य क्यों लिखा ? यहाँ मेघ को दूत बनाने में क्या अवधारणा रही ? प्रश्न उठता है कि विरह किसमें अधिक रहता है ? वसन्त में या वर्षा में ? क्या बसंत में दूतों का अभाव होता है ? वायु को भी दूत बनाया जा सकता था। कारण अवश्य है – वसन्त उदासीन और गृहत्यागी है तो वर्षा संसारी और गृहवासी है। वसन्त मन को विक्षिप्त करता है, हवा में तैरता है, पुष्प सुगन्धियों से बौरा सा जाता है। वर्षा व्यक्ति को एक स्थान पर घनीभूत करती है। बादल चिरविच्छेद की वेदना के साथ चिरमिलन का आश्वासन भी है। उसका संगीत मन को स्तम्भित करता है। ऐसा लगता है कि कालिदास का उद्देश्य यक्ष के विरह का वर्णन नहीं अपितु पारिवार्श्विक ह्रदयावालि, विशेष रूप से भारत–भू की वन्दना तथा राष्ट्रीय चेतना का परिचय देना है।

*****